ॐ तत्सत्

श्रीमच्छङ्करभगवत्पूज्यपादाचार्य्याः विजयन्तेतराम् ।

माध्वमोहद्रुममकुठारः ।

श्रीमत्पदवाक्यप्रमाणपारावारपारीण निखिलभूमण्डलाचार्य्य परमहंसपरिव्राजकाचार्य्यवर्यनिर्वाणपीठाधिपतीनां श्रीवैदिकसनातनकेवलाद्वैतसिद्धान्तप्रचारणबद्धपरिकराणां श्रीमदष्टोत्तरशतप्रातःस्मरणीयविश्ववन्दनीयमण्डलेश्वरश्रीमज्जयेन्द्रपुरीस्वामिपूज्यपादानामन्तेवासिना महेश्वरानन्देन भिक्षुणा प्रणीतः ।

अद्वैतोक्तिपटून् बटूनपि वयं बालान्नमस्कुर्महे-
ये तु द्वैतवदास्तदीयशिरसि न्यस्याम वामं पदम् ।
सिंहः स्वीयशिशून् निवेश्य हृदये सान्द्रादरादामृशत्यावेशेन भिनत्ति संभ्रमपदं मत्तेभकुम्भस्थलम् ॥ १ ॥

अज्ञेभ्यो मतिदायिनी विपदि या सन्त्रासविध्वंसिनी ।
वादिव्यूहबिलेशयप्रमथने शक्तिः परा गारुडी ।
मोहध्वान्तविमर्दिनी सुकृतिनां सद्धर्मसन्दर्शिनी ।
सद्विद्या जननी सदा विजयतां श्रीशाङ्करी भारती ॥ २ ॥

भगवत्पादपादाब्जद्वन्द्वं द्वन्द्वनिबर्हणम् ।
सुरेश्वरादिसद्भृङ्गैरवलम्बितमाभजे ॥ १ ॥

"जगन्मिथ्यात्वनिरूपण"

माध्वमतानुयायी स्वामी सत्यध्यान तीर्थजी ने "अद्वैतविमर्श" पुस्तक में लिखा है कि परमपूज्याचार्य शङ्करभगवान् का अवतार असुरों के मोहनार्थ अवैदिक बौद्धमत को ही वैदिक अद्वैतमत के नाम से प्रसिद्ध करने के लिये था । और उस प्रतिज्ञा में 'न पुण्यं न पापं' इत्यादि निर्वाणषट्क, दशश्लोकी के प्रमाण दिये और जनता

का समझा दिया कि स्वर्ग, नरक, पुण्य, पाप इत्यादिओं को अद्वैतवादी मिथ्या कहते हैं । यह आपने बहुत अच्छा किया क्योंकि एक परमात्मा से अतिरिक्त सब कुछ मिथ्या है अर्थात् स्वतः सत्ताहीन है यह बात यथार्थ है और श्रुति, स्मृति, इतिहास, पुराण इत्यादि प्रमाणों से सिद्ध है ।

तथाहि—

" नान्योऽतोऽस्ति विज्ञातैषत आत्माऽन्तर्याम्यमृतोऽतोऽन्यदार्तम् "

(बृ० उ० ३-७-२३)

अर्थ—तुमारा आत्मभूतपरमेश्वर से अतिरिक्त सब कुछ मिथ्या है । यद्यपि आर्त शब्द का अर्थ दुःखयुक्त है तो भी जो दुःखयुक्त होता है वह अनित्य और मिथ्या अवश्य होता है जैसा रज्जु में भयङ्कर सर्प ।

यो वै भूमा तत्सुखं नाल्पे सुखमस्ति । (छान्दोग्य० ७-२३-२)

अर्थ—व्यापक परमेश्वर ही सुखरूप है तदतिरिक्त परिच्छिन्न देहादि पदार्थ में सुख नहीं है क्योंकि वह पदार्थ मिथ्या और विनश्वर है । यदि वह पदार्थ पारमार्थिक सत्य होता तब परमात्मा की तरह उसको भी श्रुति सुखरूप कहती प्रत्युत दुःखरूपता बतलाने से मिथ्या सिद्ध हुआ ।

"स एवाधस्तात् स उपरिष्टात् स पश्चात् स पुरस्तात् स दक्षिणतः स उत्तरतः स एवेदꣳसर्वम्, इति, अथातोऽहंकारादेश एवाहमेवाधस्तादहमुपरिष्टादहं पश्चादहं पुरस्तादहं दक्षिणतोऽहमुत्तरतोऽहमेवेदꣳसर्वमिति, अथात आत्मादेश एवात्मैवाधस्तादात्मोपरिष्टादात्मा पश्चादात्मा पुरस्तादात्मा दक्षिणत आत्मोत्तरत आत्मैवेदꣳसर्वमिति, स वा एष एवं पश्यन्नेवं मन्वान एवं विजानन्नात्मरतिरात्मक्रीड आत्ममिथुन आत्मानन्दः स स्वराड् भवति" (छान्दोग्य० ७-२५-२)

यह श्रुति भी 'जो व्यापक ब्रह्म है वही मैं आत्मरूप हूँ "तथा ब्रह्मरूप आत्मा ही बाधसामानाधिकरण्य से सर्वरूप है, जो कुछ तदतिरिक्त देखने में आता है वह पारमार्थिक सत्य नहीं है ऐसा जाननेवाले को ही मोक्षरूप स्वाराज्य आत्मानन्द मिलता है ऐसा मुमुक्षुओं को बोधन करती है । "एकमेवाद्वितीयम्" छान्दोग्य० ६-२-१

यह श्रुति भी संसार के मिथ्यात्व में प्रमाण है, इसका विस्तार अद्वैतसिद्धि में देखो । "सलिलएको द्रष्टाअद्वैत" "नेहनानास्तिकिंचन"

"अथात आदेशो नेति नेति" बृ० "इन्द्रजालमिव मायामयं स्वप्नइव मिथ्यादर्शनम्, (मैत्रायणी शाखा) इत्यादि श्रुतियाँ भी संसार को साक्षात् मिथ्या बतलाती हैं।

"भिद्यते हृदयग्रन्थिः, "तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति, "तरति शोकमात्मवित्" इत्यादि श्रुतियाँ भी ज्ञान से संसारनिवृत्ति को बतलाती हुई संसार को मिथ्या सूचन करती हैं। यदि संसार सत्य हो, तो ज्ञान से निवृत्ति कैसे ! मिथ्या की ही ज्ञान से निवृत्ति होती है।

"इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते" 'अनृतेन हि प्रत्यूढाः नीहारेण प्रावृताः' भूयश्चान्ते विश्वमायानिवृत्तिः' इत्यादि श्रुतियाँ भी संसार और तत्कारण माया की ज्ञान से निवृत्ति बोधन करती हुई संसार को मिथ्या कहती हैं। अधिक क्या लिखें 'परमात्मा से अतिरिक्त सर्व प्रपञ्च को मिथ्या कहनेवाले हजारों वेदमन्त्र हैं। तथाहि—

"भूतानि तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो भूतानि वेद सर्वं तं परादाद्योऽन्यत्रात्मनः सर्वं वेदेदं ब्रह्मेदं क्षत्रमिमे लोका इमे देवा इमानि भूतानीदꣳ सर्वंयदयमात्मा" बृ० उ०। २-४-६

" तदेतत्प्रेयः पुत्रात्प्रेयो वित्तात्प्रेयोऽन्यस्मात्सर्वस्मादन्तरतरं यदयमात्मा स योऽन्यमात्मनः प्रियं ब्रुवाणं ब्रूयात् प्रियँ रोत्स्यतीति "

(बृ० उ० १-४-८)

" ब्रह्म वा इदमग्र आसीत् तदात्मानमेवावेदहं ब्रह्मास्मीति तस्मात्तत्सर्वमभवत् तद्यो यो देवानां प्रत्यबुध्यत स एव तदभवत्तथर्षीणां तथा मनुष्याणां, तद्धैतत्पश्यन्नृषिर्वामदेवः प्रतिपेदेऽहं मनुरभवꣳ सूर्यश्चेति तदिदमप्येतर्हि य एवं वेदाहं ब्रह्मास्मीति स इदं सर्वं भवति" बृ०, " त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी । त्वं जीर्णो दण्डेन वञ्चसि त्वं जातो भवसि विश्वतो मुखः, (श्वे० ४-३)

" क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत "

" वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः "

"ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्" 'असङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा' भ० गी०।

" तदनन्यत्वमारम्भणशब्दादिभ्यः " प्रकृतिश्च प्रतिज्ञादृष्टान्तानुपरोधात्" " आत्मेतितूपगच्छन्ति ग्राहयन्ति च " " अरूपवदेव हि तत्प्रधानत्वात् " आह च तन्मात्रम् " ब्र० सू०।

इत्यादि वेदमन्त्र, गीता, ब्रह्मसूत्र सर्वात्मक अद्वैत ब्रह्म का प्रति-

पादन करते हैं और संसार को अनित्य मिथ्या दुःखस्वरूप से उद्घोषण करते हैं।

ऐसा होने पर भी जगत् को मिथ्या प्रतिपादन करनेवाले आचार्य्य भगवान् शङ्कर के सिद्धान्त को अवैदिक कहना केवल मूर्खता प्रकट करना है।

"यथा मध्यंदिनवर्तिनि सवितरि स्वयंप्रकाशेऽपि दिवान्धाः पेचकादयः 'तमसाऽऽवृतोऽयं सवितेति कल्पयन्ति, तथाऽत्यन्तमूढबुद्धयो भगवत्याचार्य्यशङ्करे सनातनवैदिकसिद्धान्तकेवलाद्वैतप्रतिष्ठापके सकलवैदिकमर्यादारक्षके नास्तिकोऽवैदिकोऽयमिति निरूपयन्ति" इति-

उल्लू को सूर्य न दीखे उसमें सूर्य का कोई दोष नहीं है। जगन्मिथ्यात्ववाद ही सनातन वैदिक सिद्धान्त है वह कभी कलङ्करूप और अवैदिक नहीं हो सकता है। तीर्थ-पुण्य-पाप-वर्णाश्रम-गुरु-शास्त्र-इत्यादि सर्व ब्रह्मज्ञान की उत्पत्ति से प्रथम व्यावहारिक सत्तावाले रह कर अपना अपना कार्य कर सकता है तदुक्तमाचार्यैः-

देहात्मप्रत्ययो यद्वत् प्रमाणत्वेन कल्पितः।
लौकिकं वैदिकं तद्वत् प्रमाणं त्वात्मनिश्चयात्॥

जैसा 'परमेश्वर त्रिकालाबाध्यसत्यानन्दज्ञानघनरूप है ऐसा संसार कभी नहीं हो सकता है। भगवान् शङ्कराचार्य्य के निर्वाण षट्क-दशश्लोकी इत्यादि पारमार्थिक मुक्तब्रह्मरूपावस्था का प्रतिपादन करते हैं। संसार को पारमार्थिक सत्य कहनेवाले द्वैतियो! और जरा सुनिये।

बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रतरिष्यति।
इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्॥ (महाभारत आदिपर्व)

इस न्याय के अनुसार श्रीमद्भागवत में भगवान् व्यासजी क्या कहते हैं-

शोकमोहौ सुखं दुःखं देहापत्तिश्च मायया।
स्वप्नो यथात्मनः ख्यातिः संसृतिर्न तु वास्तवी॥

(भा० ११ स्क० अ० ११-१-२)

मनसा वचसा दृष्ट्या गृह्यतेऽन्यैरपीन्द्रियैः।
अहमेव न मत्तोऽन्यदिति बुध्यध्वमञ्जसा॥

(भा० ११ स्क० १३ अ०)

असत्वादात्मनोऽन्येषां भावानां तत्कृता भिदा ।
गतयो हेतवश्चास्य मृषा स्वप्नदृशो यथा ॥
(भा० ११ स्क० १३ अ० ३१)

ईक्षेत विभ्रममिदं मनसो विलासं
दृष्टं विनष्टमतिलोलमलातचक्रम् ।
विज्ञानमेकमुरुधेव विभाति माया
स्वप्नास्त्रिधा गुणविसर्गकृतो विकल्पः ॥ (भा० ११-१३-३४)

तं सप्रपञ्चमधिरूढसमाधियोगः
स्वाप्नं पुनर्न भजते प्रतिबुद्धवस्तुः । (भा० ११-१३-३७)

मायामात्रमिदं ज्ञात्वा ज्ञानं च मयि संन्यसेत् । (भा० ११-१९-१)

त्वं मायया त्रिगुणयाऽऽत्मनि दुर्विभाव्यं
व्यक्तं सृजस्यवसि लुम्पसि तद्गुणस्थः । (भा० ११-६-६)

यदिदं मनसा वाचा चक्षुर्भ्यां श्रवणादिभिः ।
नश्वरं गृह्यमाणं च विद्धि मायामनोमयम् ॥ (भा० ११)

एकस्त्वमात्मा पुरुषः पुराणः
सत्यः स्वयंज्योतिरनन्त आद्यः ।
नित्योऽक्षरोऽजस्रसुखो निरञ्जनः
पूर्णोऽद्वयो मुक्त उपाधितोऽमृतः ॥ (भा० १०-१४-२३)

तस्मादिदं जगदशेषमसत्स्वरूपं
स्वप्नाभमस्तधिषणं पुरुदुःखदुःखम् ।
त्वय्येव नित्यसुखबोधतनावनन्ते
मायात उद्यदपि यत्सदिवावभाति ॥ (भा० १०-१४-२२)

ऐसे सहस्रों श्लोक संसार के मिथ्या होने में प्रमाण हैं । यहां जिनके नीचे रेखा खींची हुई है उन वाक्यों पर पाठकों को अवश्य ध्यान देना चाहिये। इन वाक्यों से द्वैतियों की (जगत् को पारमार्थिक सत्य कहने वालों की) पोल खुल जाती है ।

देखिये मनुजी क्या लिखते हैं—

आसीदिदं तमोभूतमप्रज्ञातमलक्षणम् ।
अप्रतर्क्यमविज्ञेयं प्रसुप्तमिव सर्वतः ॥ (मनु॰ अ॰ १।५)
सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
समं पश्यन्नात्मयाजी स्वाराज्यमधिगच्छति ॥ (म॰ १२।९२)
एकः समस्तं यदिहास्ति किंचि-
त्तदच्युतान्नास्ति परं ततोन्यत् ।
सोऽहं स च त्वं च हि सर्वमेत-
दात्मस्वरूपं त्यज भेदमोहम् ॥
एवमेकमिदं ब्रह्म न भेदि सकलं जगत् ।
तद्भावभावनापन्नस्ततोऽसौ परमात्मना ॥
भवत्यभेदी भेदश्च तस्याज्ञानकृतो भवेत् । (विष्णुपुराण)
सत्यावलोकनाच्छ्रान्तिमेति संसारसंभ्रमः ।
मराविव जलज्ञानं मिथ्यापतनदुःखदम् ॥
(वासिष्ठ उत्तर रामायण निर्वाण प्रकरण)
अविद्याकृतमेवेदं दृश्यमित्येव चिन्तयन् । (वा॰ निर्वा॰)
आत्माम्बुराशौ निखिलोऽपिलोको मग्नोऽपि नाचामति नेक्षते च ।
आश्चर्यमेतन्मृगतृष्णिकाभे भवाम्बुराशौ रमते मृषैव ॥
महर्षिपतञ्जलिप्रणीतपरमार्थसार

इन पूर्वोक्त जगत् को स्पष्टतर मिथ्या कहनेवाले श्रीमद्भागवत, विष्णु पुराण श्रीउत्तररामायण (वासिष्ठ) परमार्थसार आदि के श्लोकों को देखकर भगवान् व्यास महर्षि, भगवान् वशिष्ठ, पतञ्जलि महर्षि आदि को भी आप कट्टर नास्तिक कहेंगे या नहीं, यदि कहेंगे तो आप ही एक आस्तिक रह जायेंगे-" अहोतावकीनागुरुश्रद्धा "। यदि नहीं कहेंगे तो भगवान् शङ्कराचार्यजी से ही क्या आपकी शत्रुता है (अहोते मोह निरूपणम्)

" अद्वैत शाङ्कर सिद्धान्त में वर्णाश्रमादि धर्म प्रतिपादन "

किञ्च 'मुक्तावस्था में पुण्यपाप आदि कुछ नहीं रहता है 'क्या आपके अभिमत मोक्ष में पुण्यपापादि रहता है 'यदि रहता है तो, जन्ममरणादि भी मानना होगा-तब तो वह मोक्ष संसाररूप हो जायगा; यदि नहीं मानते हैं तो अन्य सिद्धान्त के प्रति अण्ड बण्ड बोल कर आक्षेप करने का स्वभाव पड़ गया है क्या; सुनो वेद मन्त्र क्या कहता है।

'न निरोधो न चोत्पत्तिर्न बद्धो न च साधकः।
न मुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थता ॥

"अयं पुरुषः प्राज्ञेनात्मना संपरिष्वक्तो न बाह्यं किंचन वेद" "अत्र पिताऽपिता भवति, माताऽमाता लोका अलोका देवा अदेवा वेदा अवेदा अत्र स्तेनोऽस्तेनो भवति" "अनान्वागतं पुण्येनानन्वागतं पापेन" इत्यादि बृ० ४-३-२२

"व्यवहार काल में आचार्य्य शङ्कर भगवान्ने वेदाध्ययन, देव पूजा वैदिक याग दानादि सर्व का उपदेश किया है जिससे 'अन्तःकरण की शुद्धि विरक्ति आदि को प्राप्त होकर साधक गण परमात्म ज्ञान से मोक्ष के भागी बने। तथाहि-

"वेदो नित्यमधीयतां तदुदितं कर्म स्वनुष्ठीयताम्, तेनेशस्य विधीयतामपचितिः काम्ये मतिस्त्यज्यताम्, पापौघः परिधूयतां भवसुखे दोषोऽनुसंधीयताम्।" (साधनपञ्चक)

अर्थ = हे साधक गण ममुक्षुजन गुरुओं से वेदों को पढ़ो,-वैदिक कर्म का निष्काम भाव से अनुष्ठान करो, भगवान् की प्रेम से पूजा करो, काम्य कर्म में चित्त मत लगावो, परोपकार व्रत संयम सत्य भाषणादियों से पापों का नाश करो संसार के क्षणिक तुच्छ भोगों में दोषों का अनुसंधान करो,।

तथा "प्रबोध सुधाकर" नामक ग्रन्थ में आचार्य्य शङ्कर भगवान् ने "यमुनातटनिकटस्थितवृंदावनकानने महारम्ये, कल्पद्रुमतलभूमौ चरणं चरणोपरि स्थाप्य" श्लो० १८४ से लेकर १६३ तक सगुण भगवान् कृष्ण चन्द्र की उपासना का प्रतिपादन किया है तथा अच्युताष्टक में भगवन्नामस्मरण का उपदेश किया है सुनो?

'अच्युतं केशवं रामनारायणं कृष्णदामोदरं वासुदेवं हरिम्।
श्रीधरं माधवं गोपिकावल्लभं जानकीनायकं रामचन्द्रं भजे"

इत्यादि, जिसको समग्र भारत प्रेमोन्मत्त होकर के गान कर रहा है, साधनावस्था में कोइ भी तीर्थ उपासना गुरु शास्त्रादि का निषेध नहीं करते हैं, मुक्त सिद्धावस्था में परमेश्वर से अतिरिक्त सब कुछ निवृत्त हो जाता है तदुक्तमाचार्य्यैः—

'निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतः को विधिः को निषेधः ॥

'प्रातःस्मरणीय परम पूज्य सनातनधर्मोद्धारक बद्रीनारायणादि विष्णु प्रतिमा प्रतिष्ठापक जगद्गुरु शङ्कर भगवान् को 'नास्तिकः' दैत्यों के मोहक, इत्यादि दुष्ट वचन स्वकीय ग्रन्थ में लिखने से 'आपकी महत्ता और ख्याति संसार में नहीं हो सकती है, प्रत्युत आप घोर निन्दा के पात्र बनेंगे। क्या निन्दा करना आपका कुलधर्म है।

साथ साथ अपने संप्रदाय प्रवर्तक श्रीमध्वाचार्य जी को भी निन्दा भागी बनाकर निर्ल्लज्जता का परिचय देना चाहते हैं। आप में खुले मैदान में आकर पण्डित मण्डली के बीच में शास्त्रार्थ करने की शक्ति तो है नहीं, व्यर्थ नूतन विधवा की तरह गृह कोण में बैठ कर कागज के घोड़े दौड़ाते हैं ऐसा तो एक गँवार आदमी भी कर सकता है। शास्त्रार्थ की योग्यता नहीं है तो साफ़ कह देना चाहिये, नियम, स्थान, मध्यस्थ आदिका बहाना कर आँखों में धूल झोंकना उपहासास्पद है। क्या जानते ही नहीं हैं कि लज्जा किस चिड़िया का नाम है।

"एकांलज्जां परित्यज्य त्रैलोक्य विजयी भवेत्"

'और आपने अपनी पुस्तक में लिखा है' कि 'शङ्कराचार्य्य के उपर लगे हुए जगन्मिथ्यात्व वाद का कलंक धोकर उनको वैदिक सनातन धर्मियों के धर्माचार्य्य पद पर प्रतिष्ठित करने का मैं प्रयत्न करता हूं' इत्यादि अब आप के पूर्वोक्ताक्षरों की टीका टिप्पणी करता हूं सूनलिजीये, क्या आप प्रथम आचार्य्य के पद पर प्रतिष्ठित हो चुके हैं। और आचार्य्य पद से गिरे हुये श्रीशङ्कराचार्य्य जी को आप पुनः प्रतिष्ठित करेंगे। आपके आचार्य्य मध्वजी का यश तो 'पण्डित सूर्यनारायणजी प्रणीत' 'माध्वभ्रान्ति निरास नामक ग्रन्थ में बहुत कुछ सुन लिया होगा' ऐसी व्यक्ति तो भ्रष्टाचार्य्य के पदवी को सुशोभित करती हुई परंपरागत आपको

भी यही भ्रष्टा चार्य्य पदवी में प्रतिष्ठित करती है ' अब सुनो भ्रष्टा चार्य्य जी पुनः भी आप आचार्य्य शङ्कर को धर्माचार्य्य पद पर प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न करेंगें; यदि करेंगें तो हमारी टीप्पणी उनके उपर अवश्य होगी; " कृते च प्रतिकर्तव्यमेष धर्म सनातनः " ख्याल रखें आचार्य्य शङ्कर भगवान् ने कैसी विकटावस्था में करोड़ों बौद्धों का सामना कर वैदिक सनातन धर्म को बचाया ' उनका उपकार किसी भी भारत सन्तान को नहीं भूलना चाहिये । कट्टर नास्तिक द्वैत्यों के मोहक इत्यादि कुत्सित शब्द आचार्य्य शङ्कर भगवान् और उनके अनुयायियों के उपर कह करके वा अपनी पुस्तक में लिख करके ' असंख्य आर्य्य सनातनधर्मी जनता के हृदय में दुःख पैदा कराना सभ्य सज्जन सन्यासी का कर्तव्य नहीं है सुनो—

परोपकारः पुण्याय; पापाय परपीडनम् । (व्यास)

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ।

अभयं सर्वभूतेषु, दत्वा चरति यो मुनिः (मनुः)

आपकी भ्रष्टा चार्य्यादि शब्द से पुष्पाञ्जलि करके पुनः आपको अन्य आचार्य्यों की निन्दा प्रयुक्त पाप से ' अभय किया है ' । हरिः ॐ ।

संसार को सत्य कहने वाले द्वैतीयो, अब आचार्य्या शङ्कर की निन्दा करनी छोड़ दो क्यों व्यर्थ पापका ढेर शिर पर लादते हो: पुराण भी आचार्य्य शंकर की स्तुति करते हैं सुनो ध्यान देकर के जिससे तुमारे पाप कुछ कम हो जाय—

तथाहि—

" कलौ रुद्रौ महादेवो लोकानामीश्वरः परः ।
तदेव साधयेन्नृणां देवतानाञ्च दैवतम् ॥
करिष्यत्यवताराणि, शङ्करो नीललोहितः ।
श्रौतस्मार्तप्रतिष्ठार्थं भक्तानां हितकाम्यया ।
उपदक्ष्यति तज्ज्ञानं, शिष्याणां ब्रह्मसंज्ञितम ॥
सर्ववेदान्तसारं हि, धर्मान वेद निदर्शनान् ।

ये तं प्रीत्या निषेवन्ते, येन केनोपचारतः ।
विजित्य कलिजान् दोषान् यान्ति ते परमं पदम् ॥
अनायासेन सुमहत्पुण्यं ते यान्ति मानवाः ।
अनेकदोषदुष्टस्य कलेरेष महान्गुणः ॥
(कूर्म पुराण ब्राह्मी संहिता ३० अध्याय)

व्याकुर्वन्व्याससूत्रार्थं श्रुतेरर्थं यथोचिवान् ।
श्रुतेर्न्यायः स एवार्थः, शङ्करः सविताननः ॥
(शिवपुराण खं० ७—१ अ०)

※ शून्यवाद और अद्वैतविज्ञानवाद के भिन्नत्व का निरूपण ※

नित्य शुद्ध बुद्ध सत्य ज्ञान रूप त्रिविधपरिच्छेदरहित, आनन्द, अखण्ड, अद्वैत रूप आत्माऽभिन्न ब्रह्म का प्रतिपादन करने वाला अद्वैत विज्ञानवाद है।

शून्यवादी अपने शून्य को सत्यज्ञानानन्दात्मरूप मानते हैं, कि नहीं, यदि नहीं मानते हैं तो शून्यवाद अद्वैत विज्ञानवाद का भेद सिद्ध हुआ, यदि मानते हैं तो प्रमाण उपन्यास करो,-तथा देखो शांकर सिद्धान्त के प्राणभूत श्रीहर्षमिश्रप्रणीत खण्डन खण्ड खाद्य को कैसी स्पष्ट रीति से बौद्ध सिद्धान्त से शांकर सिद्धान्त का पृथक् प्रतिपादन किया है।

तथाहि—एवञ्च सति सौगतब्रह्मवादिनोरयं विशेषो यदादिमः (बौद्धः) सर्वमेव (ज्ञानज्ञेयादिकं) अनिर्वचनीयं वर्णयति तदुक्तं भगवता (बुद्धेन) लङ्कावतारे (तन्नामकबुद्धप्रणीतग्रन्थे) बुद्ध्या विविच्यमानानां स्वभावो नावधार्यते । अतो निरभिलप्यास्ते निस्स्वभावाश्च देशिताः इति ॥ विज्ञानव्यतिरिक्तं पुनरिदं विश्वं सदसद्भ्यां विलक्षणं ब्रह्मवादिनः संगिरन्ते, तथाहि नेदं सद् भवितुमर्हति वक्ष्यमाणदूषणग्रस्तत्वात् । नाप्यसदेव तथा सति लौकिकविचारकाणां सर्वव्यवहारव्याहत्यापत्तेः ।

"शून्यवाद और अद्वैत विज्ञान वाद का एकत्व में प्रमाण का खण्डन"

" ततस्तत् संबभूवासौ यद् गिरामप्यगोचरम् " यच्छून्यवादिनां शून्यं, ब्रह्म ब्रह्मविदाञ्च यत् ॥१॥ विज्ञानं विज्ञानविदां, मलानाञ्च मला-

त्मकम् । पुरुषः साङ्ख्यदृष्टीनामीश्वरो योगवादिनाम् । शिवः शैवागमस्थानां कालः कालैकवादिनाम् । यत्सर्वशास्त्रसिद्धान्तं यत्सर्वहृदयानुगम् । यत्सर्वं सर्वगं वस्तु तत् तत्त्वं तदसौ स्थितः ॥ यह श्लोक भगवान् शंकराचार्यप्रणीतसर्ववेदान्तसिद्धान्तसारसंग्रह के हैं।

इन श्लोकों से शून्य और अद्वैतविज्ञान को एक कहो तो तुल्ययुक्त्या 'पुरुष, ईश्वर, शिव काल सर्व को अद्वैत विज्ञान के साथ एकता का निरूपण करना चाहिये। यदि उनको भी अद्वैत विज्ञान के साथ एक कहोगे तो, दर्शनशास्त्रों का भेद आप को मानना न होगा, इन श्लोकों का तात्पर्य तो सूक्ष्मदर्शी विद्वान् भगवान् के कृपापात्र ही जान सकते हैं। महानुभाव विद्वानों के पास शिष्य होकर विधि पूर्वक जाओ, उनसे पूर्वोक्त श्लोकों का तात्पर्य समझो । और प्रतिबन्दी समाधान भी सुनो।

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो, बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः, अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः, सोऽयं वो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः।

इस श्लोक से आप को भी बुद्ध और विष्णु, एक ही है ऐसा उद्घोषण करना होगा, और अपने को अवैदिक बौद्धमतानुयायी भी कहना होगा, (अहो ते ज्ञानवैभवम् प्रकाण्डपाण्डित्यञ्च ! आश्चर्यं मे मनसि समुपजायते इति) ॥ और सुनो श्रुति भगवती आप द्वैतवादियों को शृङ्गपुच्छरहित पशु कहती है।

'अन्योऽसावन्योऽहमस्मि न स वेद यथा पशुः (बृ०)

'हम लोग अद्वैतवादी हैं हमारे सब आत्मा हैं इस लिए हम किसी से विद्वेष नहीं करते हैं अतएव किसी को अपशब्द कहने के लिए भी तैयार नहीं हैं किन्तु श्रुति का अर्थ मात्र समन्वय करते हैं और श्रीमद्भागवत पुराण के दशम स्कन्ध उत्तरार्द्ध अध्याय ८७।३६ श्लोक में श्रुति भगवती आप लोगों को जो कि द्वैतप्रपञ्च को पारमार्थिक सत्य मानने वाले हैं उनको मूर्ख बतलाती है जो श्रुतियां सृष्टि के आदि काल में विष्णु भगवान् को शयन से जगाने के लिए मूर्तिमती होकरके स्तुति कर रही हैं-

न यदिदमग्र आस न भविष्यदतो निधना-

दनुमितमन्तरा त्वयि विभाति मृषैकरसे।

अत उपमीयते द्रविणजातिविकल्पपथै-
र्वितथमनोविलासमृतमित्यवयन्त्यबुधाः ॥

अर्थ = अस्य संसारस्य सत्त्वे प्रमाणाभावात् मिथ्यात्वे प्रमाणस्य विद्यमानत्वात्, वितथमनोविलासं ऋतं = सत्यमिति ये अवयन्ति = जानन्ति ते अबुधाः अज्ञाः इत्यर्थः मूर्खा इति यावत्, अत्रैवं प्रयोगः विवादाध्यासितं जगत् न सत् आद्यन्तयोरविद्यमानत्वात् विकारित्वाद्दृश्यत्वात् परिच्छिन्नत्वात् शुक्तिरजतादिवदित्यन्वयदृष्टान्तः, आत्मवच्चेति व्यतिरेकदृष्टान्तः।

और पण्डित श्री सूर्यनारायणजी प्रणीत माध्वभ्रान्तिनिरास ग्रन्थ में दिये हुवे 'प्रच्छन्नोऽसौ महादुष्टश्चार्वाको मधुसंज्ञकः, इत्यादि सौर पुराणादि के श्लोक का समन्वय पूर्वोक्त भ्रष्टाचार्य्यादि शब्दों से किया है हम अपनी तरफ से कुछ नहीं लिखते हैं।

माध्वाचार्य्य सत्यध्यानतीर्थजी गया नगर की नोटिस से तथा वेदान्त शिरोमणि स्वामी ब्रह्मानन्दजी से भस्मधारण के नोटिसी शास्त्रार्थ में परास्त होकर अब भस्म रुद्राक्ष धारण करने में वेदनिन्दितत्व का नाम लेना ही भूल गये। (हंत भोः भवतो भस्मधारणनिषेधप्रचारणनिपुणत्वम्)

इह कुमतिरतत्त्वे तत्त्ववादी वराकः प्रलपति यदकाण्डे खण्डनाभासमुच्चैः। प्रतिवचनममुष्मै तस्य को वक्तुविद्वान् नहि रुतमनुरौति ग्रामसिंहस्य सिंहः ॥ श्रीव्यासशङ्करसुरेश्वरपद्मपादान् वेदान्तशास्त्रसुनिबन्धकृतस्तथान्यान्। विद्याप्रदानिह यतिप्रवरान् दयालून सर्वान् गुरून् सततमेव नमामि भक्त्या ॥

काश्यां ललिताघट्टस्थसिद्धगिरिमठस्थवेदान्तविशारद
स्वामिमोहनगिरिपरिव्राजकप्रकाशितः।

काश्यां रामघट्टे हितचिन्तकाभिधे मुद्रणालये
कृ० व० पावगी इत्येतैर्मुद्रितः। १९६५ a

२/२२

